

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 5 अध्याय 19: भारत-वर्ष की महिमा

22 September 2026

पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



किम्पुरुष-वर्ष में, भक्तों में अग्रणी श्रीहनुमान, सीता के प्रिय और लक्ष्मण द्वारा अग्रज-रूप में सम्मानित उन प्रभु के समक्ष हाथ जोड़े घुटनों के बल बैठकर, किम्पुरुषों के साथ, अविरल भक्ति से उनकी आराधना करते हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में पुनः आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। जम्बूद्वीप के स्वर्णिम विभागों में हमें विस्मय से घुमाकर, श्रीशुक अब उस महान् द्वीप-भूमि का अपना वर्णन समेटते हैं — और उसके सबसे कोमल रत्न वे अन्त के लिए बचा रखते हैं। हमें किम्पुरुष-वर्ष में ले जाया जाता है, जहाँ श्रीहनुमान श्रीराम की आराधना शुद्ध प्रेम से उपजे एक

स्तवन से करते हैं; फिर भारत-वर्ष में, जहाँ भगवान् नर-नारायण के रूप में अनन्त तपस्या करते हैं और मुनि नारद भक्ति से उनकी आराधना करते हैं। और हम सबसे हृदयस्पर्शी सत्य सुनते हैं: कि इस पावन भारत-भूमि में जन्म देवताओं तक के द्वारा वांछित एक निधि है।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 5 (पंचम स्कन्ध)
- अध्याय: 19 (उन्नीसवाँ अध्याय)
- अध्याय-शीर्षक: राम को हनुमान का स्तवन और भारत-वर्ष की महिमा
- प्रमुख वक्ता: श्रीशुकदेव गोस्वामी (श्रीशुक), राजा परीक्षित को कथा सुनाते हुए; कथा के भीतर श्रीहनुमान का श्रीराम को स्तवन और मुनि नारद का नर-नारायण को स्तवन समाहित हैं
- प्रमुख श्रोता: राजा परीक्षित — और यह संवाद सूत गोस्वामी द्वारा नैमिषारण्य में एकत्रित ऋषियों को पुनः सुनाया जाता है
- मुख्य स्थल: किम्पुरुष-वर्ष, जहाँ हनुमान श्रीराम की आराधना करते हैं; और भारत-वर्ष, अपने पावन आश्रम बदरिकाश्रम, अपने पर्वतों और नदियों, तथा जम्बूद्वीप के भीतर अपने आठ उपद्वीपों सहित
- केन्द्रीय विषय: किम्पुरुष-वर्ष में हनुमान द्वारा भगवान् राम की आराधना; भारत-वर्ष में नर-नारायण की तपस्या और नारद की भक्ति; भारत के पावन पर्वत और नदियाँ; इस भूमि में मानव-जन्म की अद्वितीय महिमा, जिसे देवता तक गाते हैं; और जम्बूद्वीप के आठ उपद्वीप
- प्रमुख श्लोक-सीमा: स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 1-31
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण

पिछले अध्याय से

अठारहवें अध्याय में, श्रीशुक ने हमें जम्बूद्वीप के वर्षों में से गुजारा और वे स्तवन सुनाए जिनसे उन भूमियों के अधिष्ठाता भगवान् के अनेक रूपों की आराधना करते हैं — हयग्रीव, प्रह्लाद द्वारा पूजित नृसिंह, देवी लक्ष्मी द्वारा पूजित कामदेव, मनु द्वारा अर्चित मत्स्य, अर्यमा द्वारा सम्मानित कूर्म, और माता पृथ्वी द्वारा पूजित दिव्य वराह। प्रत्येक भूमि ने अपनी प्रार्थना अर्पित की, और प्रत्येक प्रार्थना ने उसी एक परम भगवान् का गान किया जो समस्त प्राणियों को धारण करते हैं। वही आराधना-धारा अब किम्पुरुष-वर्ष और भारत-वर्ष में आगे बहती है, जहाँ भक्ति अपनी सर्वाधिक प्रिय और आशामय अभिव्यक्ति तक पहुँचती है।

किम्पुरुष-वर्ष में श्रीराम की आराधना

किम्पुरुष-वर्ष में वे भक्तों में अग्रणी श्रीहनुमान निवास करते हैं, जो अपना समस्त आनन्द सदा अपने प्रभु के चरणों में रहने में पाते हैं। उस भूमि के निवासी किम्पुरुषों के साथ, वे अखण्ड भक्ति से उस सनातनतम पुरुष की आराधना करते हैं, जो वहाँ भगवान् श्रीराम के रूप में विराजते हैं — लक्ष्मण के अग्रज और सीता के आह्लाद। उस प्रदेश के अग्रणी निवासी अर्द्धिषेण के संग, हनुमान अपने दिव्य प्रभु की परम-मंगलमयी कथा को, जैसे गन्धर्व उसे गाते हैं, अनुरक्त प्रेम से सुनते हैं, और फिर, हृदय उमड़ आने पर, स्वयं वही स्तुति उठा लेते हैं।

ॐ नमो भगवते उत्तमश्लोकाय नम आर्यलक्षणशीलव्रताय नम उपशिक्षितात्मन उपासितलोकाय नमः साधुवादनिकषणाय नमो
ब्रह्मण्यदेवाय महापुरुषाय महाराजाय नम इति ॥ ३ ॥

*om namo bhagavate uttamaślokāya nama ārya-lakṣaṇa-śīla-vratāya nama upaśikṣitātmana
upāsita-lokāya namaḥ sādhu-vāda-nikaṣaṇāya namo brahmaṇya-devāya mahā-puruṣāya mahā-
rājāya nama iti*

अर्थ: ॐ! उन तेजोमय भगवान् को नमस्कार जिनका गान श्रेष्ठतम श्लोकों से होता है; उन्हें नमस्कार जिनके लक्षण, चरित्र और व्रत सच्चे आर्यों के हैं; उन्हें नमस्कार जिन्होंने अपने आपको पूर्णतया अनुशासित किया और जिन्होंने प्रजा की इच्छा का सम्मान किया; उन्हें नमस्कार जो सज्जनता की परख की कसौटी हैं; ब्राह्मणों के प्रति समर्पित भगवान् को, परम पुरुष को, महान् राजा को नमस्कार — बारम्बार नमस्कार।
(स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 3)

हनुमान की स्तुति फिर अपने प्रभु के गहनतम रहस्य की ओर मुड़ती है। वे उनकी शरण लेते हैं जो शुद्ध चैतन्य-स्वरूप हैं, एकमात्र सत्य सत्ता, जो अपनी दिव्य शक्ति से अपनी माया को दूर रखते हैं, जो इस वस्तु-जगत् से परे हैं, पूर्णतया शान्त, केवल शुद्ध-हृदय द्वारा जाने जाने योग्य, समस्त नाम-रूप से अतीत। हनुमान गाते हैं कि प्रभु का मानव-रूप में अवतार मनुष्यों को महापुरुषों का मार्ग सिखाने के लिए था, न कि केवल असुर-जाति के संहार के लिए — अन्यथा विश्व की आत्मा, जो सदा अपने आनन्द में रमण करती है, सीता के वियोग में शोकग्रस्त-सी कैसे प्रतीत होती, यदि न होता कि वे संसार को दिखाते कि महान् अपना धर्म कैसे निभाते हैं?

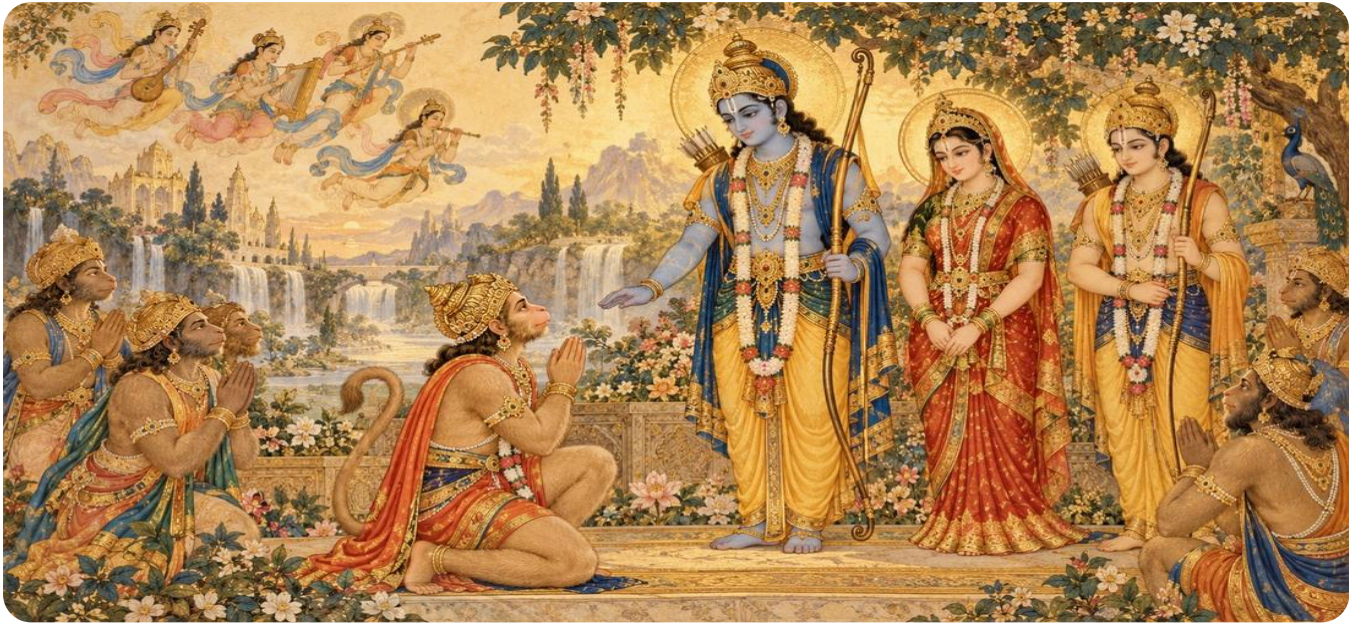
इस प्रतीत होने वाले शोक का गूढ़ रहस्य यहीं छिपा है। श्रीराम को किसी वस्तु की कमी नहीं और वे वास्तव में कभी वियोग-दुःखी नहीं होते, फिर भी उन्होंने मनुष्यों के लिए दो शिक्षाएँ देने हेतु स्वयं दुःखी-से प्रतीत होना स्वीकार किया। पहली यह कि पत्नी और गृहस्थी पर टिका सुख, चाहे कितना भी प्रिय क्यों न हो, कभी दुःख से मुक्त नहीं होता — यह उन सबके लिए चेतावनी है जो अपना समस्त सुख वहीं खोजते हैं। दूसरी यह कि जो कोई पत्नी स्वीकार करे, उसे अपने प्राणों की परवाह किए बिना पूर्ण और अटूट निष्ठा से उसकी रक्षा करनी चाहिए — इसीलिए श्रीराम ने सागर पार किया और रावण के समस्त कुल का संहार किया, ताकि सीता के प्रति अपने कर्तव्य में तनिक भी चूक न हो। इस प्रकार, प्रतीत होने वाली पीड़ा में भी, प्रभु मौन रूप से त्यागी और गृहस्थ दोनों को उनका सच्चा धर्म सिखा रहे थे (श्लोक ५-६)।

न उच्च जन्म, न सौन्दर्य, न वाक्पटुता, न तीक्ष्ण बुद्धि प्रभु की कृपा जीतती है; क्योंकि श्रीराम ने वन के वानरों को भी अपनी मैत्री में लिया, जिनके पास इनमें से कुछ न था। इसलिए, हनुमान घोषित करते हैं, चाहे कोई देव हो या असुर, वानर हो या मनुष्य, जो भी हो, उसे अपने समस्त प्राणों से श्रेष्ठ श्रीराम की शरण लेनी चाहिए — मानव-रूप में साक्षात् श्रीहरि की — जो अपने प्रति किए गए सेवा को कभी नहीं भूलते और जिन्होंने अपनी पार्थिव लीला के अन्त में उत्तर कोसल की समस्त प्रजा को ऊर्ध्व लोकों तक पहुँचाया।

भारत-वर्ष में नर-नारायण की तपस्या

उस प्रेम-गान की भूमि से, श्रीशुक हमारी दृष्टि भारत-वर्ष की ओर मोड़ते हैं, वह क्षेत्र जहाँ कर्म अपना फल देते हैं। यहाँ स्वयं परम भगवान्, नर-नारायण के नाम से, बदरिकाश्रम के पावन आश्रम में निवास करते हैं और ऐसी तपस्या करते हैं जो कल्प के अन्त तक चलती रहेगी। उनकी गति संसार से अलक्षित रहती है, और वे यह तप शुद्ध करुणा से करते हैं — उन पर कृपा बरसाने को जिन्होंने अपने मन को वश में किया है, और

उनके समक्ष एक श्रेष्ठ उदाहरण रखने को। श्रीमद्भागवतम् हमें बताता है कि ऐसी तपस्या साधक के भीतर अनेक सिद्धियाँ जगाती है — धर्म गहराता है, ज्ञान का प्रकाश फैलता है, वैराग्य दृढ़ होता है, योग-बल बढ़ता है — और साधक क्रमशः शान्त, संयत तथा अन्ततः आत्म-साक्षात्कार को उपलब्ध होता है।



भारत-वर्ष में बदरिकाश्रम के पावन आश्रम में, भगवान् अपने युगल रूप नर-नारायण में अनन्त तपस्या करते हैं, उन पर करुणा से जो अपने मन को वश में करना चाहते हैं (श्लोक 9)।

भारतेऽपि वर्षे भगवान्नरनारायणाख्य आकल्पान्तमुपचितधर्मज्ञानवैराग्यैश्वर्योपशमोपरमात्मोपलम्भनमनुग्रहायात्मवतामनुकम्पया तपोऽव्यक्तगतिश्चरति ॥ ९ ॥

bhārate 'pi varṣe bhagavān nara-nārāyaṇākhyā ākalpāntam upacita-dharma-jñāna-vairāgyaiśvaryopaśamoparamātmopalambhanam anugrahāyātmavatām anukampayā tapo 'vyakta-gatiś carati

अर्थ: भारत-वर्ष में भी, परम भगवान्, नर-नारायण के नाम से, कल्प के अन्त तक तपस्या करते हैं, उनकी गति अलक्षित रहती है — करुणा से और उन पर कृपा हेतु जिन्होंने अपने आपको वश में किया है — ऐसी तपस्या जो धर्म, ज्ञान, वैराग्य, दिव्य ऐश्वर्य, शान्ति और आत्म-संयम को बढ़ाती है, और अन्ततः आत्मा के साक्षात्कार तक ले जाती है। (स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 9)

नारद का भक्ति-स्तवन

सावर्णि को — आने वाले एक युग के अधिष्ठाता मनुओं में से एक को — पंचरात्र की विद्या में, तथा भगवान् द्वारा स्वयं श्रीमद्भगवद्गीता में सिखाए गए सांख्य और योग में उपदेश देने के अभिप्राय से, तेजस्वी मुनि नारद नर-नारायण के समक्ष आते हैं। भारत-वर्ष के लोगों के साथ, जो वर्ण और आश्रम के पावन विभागों से अपना जीवन व्यवस्थित करते हैं, नारद परम भक्ति के भाव से भगवान् की आराधना करते हैं और यह स्तुति-स्तवन उठा लेते हैं।



हाथ में अपनी वीणा लिए और भारत-वर्ष के लोग अपने साथ, देवर्षि नारद भगवान् नर-नारायण की आराधना परम भक्ति के एक स्तवन से करते हैं (श्लोक 11)।

ॐ नमो भगवते उपशमशीलायोपरतानात्म्याय नमोऽकिञ्चनवित्ताय ऋषिऋषभाय नरनारायणाय परमहंसपरमगुरवे आत्मारामाधिपतये
नमो नम इति ॥ ११ ॥

om namo bhagavate upasama-silayoparatānātmyāya namo 'kiñcana-vittāya ṛṣi-ṛṣabhāya nara-nārāyaṇāya paramahansa-parama-gurave ātmārāmādhīpataye namo nama iti

अर्थ: ॐ! उन भगवान् को नमस्कार जिनका स्वभाव ही शान्ति है, जो अनात्म के साथ समस्त मिथ्या तादात्म्य से विरत हैं; उन्हें नमस्कार जो अकिञ्चनों के एकमात्र धन हैं, ऋषियों में श्रेष्ठ, नर-नारायण, परमहंसों के परम गुरु और आत्माराम जनों के अधिपति — नमस्कार, बारम्बार नमस्कार। (स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 11)

नारद गाते रहते हैं। वे उन भगवान् को नमन करते हैं जो, यद्यपि इस समस्त विश्व के रचयिता हैं, सृष्टि के कर्म से कभी बँधते नहीं; जो, यद्यपि देह से युक्त हैं, देह की भूख-प्यास से अछूते हैं; जो, यद्यपि सर्वदर्शी हैं, जो देखते हैं उसके गुणों से कभी कलंकित नहीं होते — संक्षेप में, पूर्णतया असंग, नित्य-शुद्ध, समस्त के साक्षी। नारद कहते हैं कि इसी में योग की वह परम सिद्धि निहित है जिसे महान् ब्रह्मा ने कभी प्रकट किया था: कि आत्मा, देह के साथ समस्त तादात्म्य को त्यागकर, मन को उन भगवान् में स्थिर करे जो प्रकृति के समस्त गुणों से परे हैं, और अन्तिम क्षण में उन्हें वहाँ जन्म से पोषित भक्ति के द्वारा धारण करे। वे जोड़ते हैं कि केवल विद्या के पीछे समस्त प्रयास उसके लिए व्यर्थ श्रम है जो, चाहे कितना ही पढ़ा-लिखा हो, फिर भी अपनी क्षणभंगुर, नश्वर देह के लिए काँपता है, उस अज्ञानी से भिन्न नहीं जो इस लोक और परलोक के सुखों का दास है, सन्तान, पत्नी और सम्पत्ति के लिए सदा चिन्तित। और इसलिए नारद उस एकमात्र सच्चे उपचार की प्रार्थना करते हैं — कि भगवान् अपने भक्तों को अपने प्रति प्रेममयी भक्ति प्रदान करें, जिससे वे इस दीन देह पर “मैं” और “मेरा” की पकड़ को शीघ्र त्याग सकें, वह भ्रम जिसे त्यागना इतना कठिन है, जो भगवान् की अपनी ही माया से उत्पन्न है।

भारत-वर्ष को पावन नादियों और पर्वत

श्रीशुक फिर स्वयं भारत-वर्ष का पावन मुख उघाड़ते हैं, यह भूमि जो भगवान् को इतनी प्रिय है और उन पर जन्मे लोगों के लिए इतनी धन्य। वे इसके अनेक महान् पर्वतों की और उनकी ढलानों से बहती असंख्य नदियों की बात करते हैं — ऐसे पावन जल कि वे अपने नामों की ध्वनि मात्र से उन्हें शुद्ध कर देते हैं जो उन्हें स्पर्श करते हैं।



भारत-वर्ष के पर्वत अगणित श्रेणियों में उठते हैं, और उनकी ढलानों से वे असंख्य पावन नदियाँ बहती हैं जिनके नाम मात्र उन्हें शुद्ध करते हैं जो उनके जल को स्पर्श करते हैं (श्लोक 16-18)।

भारतेऽप्यस्मिन्वर्षे सरिच्छैलाः सन्ति बहवो मलयो मङ्गलप्रस्थो मैनाकस्त्रिकूट ऋषभः कूटकः कोल्लकः सह्यो देवगिरिऋष्यमूकः श्रीशैलो वेङ्कटो महेन्द्रो वारिधारो विन्ध्यः शुक्तिमानृक्षगिरिः पारियात्रो द्रोणश्चित्रकूटो गोवर्धनो रैवतकः ककुभो नीलो गोकामुख इन्द्रकीलः कामगिरिरिति चान्ये च शतसहस्रशः शैलास्तेषां नितम्बप्रभवा नदा नद्यश्च सन्त्यसङ्ख्याताः ॥ १६ ॥

bhārate 'py asmin varṣe saric-chailāḥ santi bahavo malayo maṅgala-prastho mainākas trikūṭa ṛṣabhaḥ kūṭakaḥ kollakaḥ sahyo devagirir ṛṣyamūkaḥ śrī-śailo veṅkaṭo mahendro vāridhāro vindhyaḥ śuktimān ṛkṣagiriḥ pāriyātro droṇaś citrakūṭo govardhano raivatakaḥ kakubho nīlo gokāmukha indrakīlaḥ kāmagirir iti cānye ca śata-sahasraśaḥ śailās teṣāṃ nitamba-prabhavā nadā nadyaś ca santy asaṅkhyātāḥ

अर्थ: इस भारत-वर्ष की भूमि में भी अनेक पर्वत हैं — मलय, मङ्गलप्रस्थ, मैनाक, त्रिकूट, ऋषभ, कूटक, कोल्लक, सह्य, देवगिरि, ऋष्यमूक, श्रीशैल, वेङ्कट, महेन्द्र, वारिधार, विन्ध्य, शुक्तिमान, ऋक्षगिरि, पारियात्र, द्रोण, चित्रकूट, गोवर्धन, रैवतक, ककुभ, नील, गोकामुख, इन्द्रकील और कामगिरि — और इनके अतिरिक्त सैकड़ों-सहस्रों अन्य; और उनकी ढलानों से छोटी-बड़ी नदियाँ, गणना से परे, बहती हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 16)

उन पावन जलों में श्रीशुक चन्द्रवसा और ताम्रपर्णी, कृतमाला और कावेरी, तुङ्गभद्रा, कृष्णा और गोदावरी, नर्मदा और सिन्धु, महान् ब्रह्मपुत्र और सोन, यमुना और सरस्वती, गोमती और सरयू, शतद्रु, चन्द्रभागा और अनेक अन्य के नाम लेते हैं — सभी पावन, सभी शुद्धिकारी। और इस धन्य भूमि पर, श्रीशुक प्रकट करते हैं, मनुष्य के रूप में जन्मे जीव अपने लिए प्रत्येक प्रकार की गति अर्जित करते हैं — दिव्य, मानवीय या नारकीय — सत्त्व, रज और तम के गुणों में अपने ही कर्मों से। फिर भी यहीं परम कल्याण भी जीता जा सकता है: भगवान् वासुदेव, समस्त प्राणियों के अन्तर्यामी, के प्रति प्रेममयी भक्ति का अविरल, निष्काम प्रवाह। वह परम प्राप्ति केवल भगवान् विष्णु के सेवकों के प्रेममयी संग के दुर्लभ वरदान से ही मिलती है — ऐसा संग जो अनेक-अनेक जन्मों के पुण्य-कर्मों के फल पकने पर ही सुलभ होता है — और यही संग है जो अन्ततः हृदय में अज्ञान की कठिन गाँठ को काटकर भक्ति का मार्ग खोलता है।

भारत-वर्ष में जन्म की महिमा

अब श्रीशुक राजा परीक्षित को एक ऐसा आश्चर्य सुनाते हैं जो हृदय को उठा देता है: स्वर्ग के देवता स्वयं उनसे ईर्ष्या करते हैं जो इस भारत-भूमि पर मनुष्य के रूप में जन्म लेते हैं। क्योंकि यहाँ, एक नश्वर देह और क्षणभंगुर जीवन में, आत्मा को समस्त सृष्टि में सबसे बहुमूल्य वह एक अवसर मिलता है — श्रीहरि की सेवा करने और उनके अभय धाम को जीतने का।



अपने देदीप्यमान स्वर्गों से देवता भारत-वर्ष की ओर दृष्टि डालते हैं और उन आत्माओं के लिए लालसा से गाते हैं जिन्होंने इस भूमि में मानव-जन्म जीता है, जो भगवान् की प्रेममयी सेवा के लिए इतना उपयुक्त है (श्लोक 21-24)।

एतदेव हि देवा गायन्ति—

अहो अमीषां किमकारि शोभनं प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः ।

यैर्जन्म लब्धं नृषु भारताजिरे मुकुन्दसेवौपयिकं स्पृहा हि नः ॥ २१ ॥

etad eva hi devā gāyanti — aho amīṣāṁ kim akāri śobhanam prasanna eṣāṁ svid uta svayam hariḥ yair janma labdham nṛṣu bhāratājire mukunda-sevaupayikaṁ spṛhā hi naḥ

अर्थ: देवता गाते हैं: अहो, इन आत्माओं ने कौन-सा मंगलमय कर्म किया, या श्रीहरि अपनी ही करुणा से इन पर प्रसन्न हुए, कि इन्होंने भारत-भूमि में मनुष्यों के बीच जन्म जीता — मुकुन्द की प्रेममयी सेवा के योग्य एक जन्म, वह जन्म जिसकी लालसा हमें भी है! (स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 21)

देवता पूछते हैं, अपने समस्त यज्ञों, तपस्याओं, व्रतों और दानों से, या उन पुण्यों से जीते स्वर्ग तक से, हमने वास्तव में क्या पाया, जहाँ इन्द्रियों की निरन्तर तृप्ति भगवान् नारायण को स्मरण करने का अवसर ही नहीं छोड़ती? कहीं श्रेष्ठ, वे गाते हैं, है भारत में एक छोटा-सा मानव-जीवन, उन उच्चतम स्वर्गीय लोकों में एक पूरे कल्प के राज्य से भी, जो फिर भी पुनर्जन्म में समाप्त होते हैं — क्योंकि इस भूमि के बुद्धिमान, एक ही क्षणभंगुर पल के कर्म भी भगवान् को अर्पित करके, श्रीहरि के अभय धाम को प्राप्त करते हैं। कोई भी लोक वांछनीय नहीं, वे घोषित करते हैं, स्वयं ब्रह्मा का धाम भी नहीं, जहाँ भगवान् की कथाओं की अमृत-धाराएँ न बहती हों और उनके प्रेमी भक्त न मिलते हों। फिर भी वे जीव जो, मुक्ति के लिए पूर्णतया सुसज्जित मानव-जन्म पाकर भी, पुनर्जन्म से मुक्त होने का प्रयास नहीं करते, पुनः बन्धन में गिर जाते हैं — उन पक्षियों की भाँति जो व्याध के जाल से छूटकर भी उसी वृक्ष पर क्रीड़ा करते हैं जहाँ वे कभी फँसे थे।

समस्त पूजा को स्वीकार करने वाले भगवान्

श्रीशुक भारत के लोगों के यज्ञों में छिपी एक और कृपा प्रकट करते हैं। यद्यपि वे भगवान् को अनेक नामों से आवाहित करते हैं — इन्द्र, अग्नि और अन्य — वह एक ही परम भगवान् हैं, हर प्रकार से पूर्ण और समस्त वरदानों के दाता, जो स्वयं प्रत्येक आहुति को, जो श्रद्धा से पावन अग्नि में डाली जाती है, सहर्ष स्वीकार करते हैं। वे मनुष्यों को वे वर देते हैं जो वे उनसे माँगते हैं; किन्तु ऐसे वर सच्चा उपहार नहीं, क्योंकि जो उनके लिए प्रार्थना करता है वह शीघ्र ही फिर प्रार्थना करने लौट आता है। किन्तु उन्हें जो उनकी आराधना कुछ भी न चाहते हुए करते हैं, वे स्वयमेव अपने चरण-कमल प्रकट करते हैं, जो हृदय की प्रत्येक लालसा को सर्वकाल के लिए तृप्त करते हैं। और इसलिए बुद्धिमान प्रार्थना करते हैं कि यदि स्वर्ग के सुखों के पश्चात् भी उनके नाम कोई पुण्य शेष रहे, तो वे इसी भारत में जन्म से धन्य हों, इस स्पष्ट चेतना के साथ कि केवल श्रीहरि ही आराधना के योग्य हैं।

जम्बूद्वीप के आठ उपद्वीप

अन्ततः श्रीशुक आठ छोटे द्वीपों की बात कहकर जम्बूद्वीप का अपना वर्णन समेटते हैं, जो उसकी सीमाओं के भीतर स्थित हैं।



राजा सगर के पुत्र, यज्ञ के अश्व की खोज में हर ओर पृथ्वी को खोदते हुए, जम्बूद्वीप के भीतर आठ उपद्वीपों को उत्पन्न करते हैं (श्लोक 29-30)।

श्रीशुक उवाच

जम्बूद्वीपस्य च राजन्नुपद्वीपानष्टौ हैक उपदिशन्ति सगरात्मजैरश्वान्वेषण इमां महीं परितो निखनद्विरुपकल्पितान् ॥ २९ ॥

तद्यथा स्वर्णप्रस्थश्चन्द्रशुक्ल आवर्तनो रमणको मन्दरहरिणः पाञ्चजन्यः सिंहलो लङ्केति ॥ ३० ॥

śrī-śuka uvāca jambūdvīpasya ca rājann upadvīpān aṣṭau haika upadiśanti sagarātmajair aśvānveṣaṇa imāṁ mahīm parito nikhanadbhir upakalpitaṁ tad yathā svarṇaprasthaś candraśukla āvartano ramaṇako mandarahariṇaḥ pāñcājanyaḥ siṁhalo laṅketi

अर्थ: श्रीशुक ने कहा: हे राजन्, कुछ बुद्धिमान जन जम्बूद्वीप के भीतर आठ उपद्वीपों की भी बात करते हैं, जो तब उत्पन्न हुए जब राजा सगर के पुत्रों ने यज्ञ के अश्व की खोज में इस पृथ्वी को हर ओर खोद डाला। वे स्वर्णप्रस्थ, चन्द्रशुक्ल, आवर्तन, रमणक, मन्दर-हरिण, पाञ्चजन्य, सिंहल और लङ्का के नाम से जाने जाते हैं। (स्कन्ध 5, अध्याय 19, श्लोक 29-30)

इस प्रकार, श्रीशुक राजा से कहते हैं, जम्बूद्वीप का उसके अनेक वर्षों में विभाजन पूर्णतया वर्णित किया गया, ठीक वैसे ही जैसे उन्होंने स्वयं इसे अपने गुरु से प्राप्त किया था — और इन शब्दों के साथ उस महान् द्वीप-भूमि का प्रेममय वर्णन विश्राम पाता है।

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

भगवान् का अवतार संसार को शिक्षा देता है। हनुमान गाते हैं कि श्रीराम मानव-रूप में केवल दुष्टों के संहार के लिए नहीं आए, अपितु समस्त लोगों को महापुरुषों का मार्ग दिखाने के लिए। भगवान् का प्रत्येक कर्म — उनका सीता के लिए प्रतीत होता शोक भी — हमारे लिए एक शिक्षा है, उनके द्वारा दी गई जो सदा अछूते और सदा भीतर से शान्त हैं।

शरण सबके लिए खुली है, चाहे उनका जन्म कैसा भी हो। क्योंकि श्रीराम ने वन के वानरों को भी अपना मित्र बनाया, हनुमान घोषित करते हैं कि भगवान् का प्रेम जीतने के लिए न किसी वंश, सौन्दर्य या प्रतिभा की आवश्यकता है। देव हो या मनुष्य, उच्च हो या नीच, जो भी उनकी पूर्ण हृदय से शरण लेता है, वह स्वीकार किया जाता है।

भक्ति ही एकमात्र सच्चा उपचार है। नारद का स्तवन केवल विद्या और योग-प्रयास को एक ओर रखकर एक ही उपहार की प्रार्थना करता है — भगवान् के प्रति प्रेममयी भक्ति — एकमात्र वह शक्ति जो “मैं” और “मेरा” के उस भ्रम को घोल सकती है जो हमें नश्वर देह से बाँधता है।

भारत की यह भूमि परम धन्य है। देवता स्वयं यहाँ मानव-जन्म के लिए लालायित हैं, क्योंकि यह वह क्षेत्र है जहाँ एक क्षण का कर्म भी भगवान् को अर्पित करके उनका अभय धाम जीत सकता है। जो स्वर्ग नहीं दे सकते, वह इस भूमि में एक छोटा और विनम्र मानव-जीवन दे सकता है।

मानव-जीवन मुक्ति के लिए है। इस दुर्लभ जन्म को पाकर, जो ईश्वर की सेवा के लिए पूर्णतया उपयुक्त है, और फिर भी मुक्ति के लिए प्रयास न करना, उस मुक्त पक्षी की भाँति पुनः बन्धन में लौट जाना है जो फँसाने वाले वृक्ष पर लौट आता है। जन्म का आशीर्वाद केवल भगवान् के स्मरण और सेवा में ही सार्थक होता है।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

इन श्लोकों को सुनने के पश्चात् हृदय में जो बात ठहरती है, वह एक महान् और कोमल प्रोत्साहन है। श्रीशुक ने हमें दीप्तिमान महाद्वीपों और अकल्पनीय युगों के पार बहा दिया — और फिर वे झुककर सबसे मधुर रहस्य फुसफुसाते हैं: कि अपने वैभव में देवता हमसे ईर्ष्या करते हैं। वे, जो अमृत पीते और एक कल्प तक राज्य करते हैं, वह सब उसके लिए दे देंगे जिसे हम प्रायः अनदेखा कर देते हैं — इस पावन भूमि में एक छोटा-सा मानव-जीवन, जहाँ भगवान् की कथाएँ नदियों-सी बहती हैं और उनके चरण एक ही दिन की भक्ति से सेवित हो सकते हैं। हनुमान हमें उस सेवा का रूप दिखाते हैं: भगवान् की महिमा को सुनने में आनन्दित होना और उसे प्रेम से उन्हें लौटा देना। नारद उसकी अन्तरतम प्रार्थना दिखाते हैं: धन या स्वर्ग के लिए नहीं, अपितु भक्ति के लिए ही। हमें उच्चकुल, विद्वान या शक्तिशाली होने की आवश्यकता नहीं; वन के वानर इनमें से कुछ न थे, फिर भी श्रीराम ने उन्हें मित्र कहा। यदि आज हम एक क्षणभर भी उनके स्मरण में बिताएँ, तो हम अपने हाथों में वही निधि थामे हैं जिसकी देवता कामना करते हैं।

एक दैनिक भक्ति-साधना

आज, हनुमान के उदाहरण का एक सरल रूप में अनुसरण करें: कुछ शान्त क्षण भगवान् की पावन कथा का एक अंश सुनने या पढ़ने के लिए निकालें, और फिर, हाथ जोड़कर, उसे स्तुति-रूप में उन्हें लौटा दें, भीतर ही कहते हुए: “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।” और दिन भर, देवताओं की उस लालसा को स्मरण रखें — कि यही मानव-जीवन श्रीहरि की सेवा का दुर्लभ और बहुमूल्य अवसर है। एक छोटा-सा कर्म भी, एक क्षणभर का ही, पूर्णतया उन्हें अर्पित करें, बदले में उनकी कृपा के अतिरिक्त कुछ न चाहते हुए। इस प्रकार इस पावन भूमि में जन्म का आशीर्वाद व्यर्थ नहीं होता, अपितु क्षण-क्षण, भगवान् के अभय धाम की ओर मोड़ दिया जाता है।

उपसंहार

पंचम स्कन्ध का उन्नीसवाँ अध्याय जम्बूद्वीप के श्रीशुक के वर्णन को उसके सबसे प्रिय स्वरों पर समेटता है। किम्पुरुष-वर्ष में, नित्य-निष्ठ हनुमान भगवान् श्रीराम की आराधना शुद्ध प्रेम के एक स्तवन से करते हैं, यह गाते हुए कि भगवान् संसार को शिक्षा देने मानव-रूप में अवतरित हुए, और वे सबको स्वीकार करते हैं जो उनकी शरण लेते हैं, चाहे उनका जन्म कैसा भी हो। भारत-वर्ष में, भगवान् नर-नारायण के रूप में करुणा से अनन्त तपस्या करते हैं, और मुनि नारद उनकी आराधना करते हैं, समस्त भ्रम के एकमात्र उपचार-रूप में प्रेममयी भक्ति की प्रार्थना करते हुए। श्रीशुक फिर भारत के पावन पर्वत और नदियाँ उघाड़ते हैं, और वह आश्चर्य प्रकट करते हैं कि देवता स्वयं इस भूमि में मानव-जन्म के लिए लालायित हैं, जहाँ भगवान् को अर्पित एक क्षणभंगुर कर्म भी उनका अभय धाम जीत लेता है। वे जम्बूद्वीप के आठ उपद्वीपों के साथ समापन करते हैं, जो सगर के पुत्रों द्वारा उत्पन्न हुए। इन सबके बीच एक देदीप्यमान सत्य चमकता है: कि यह बहुमूल्य मानव-जीवन हमें भगवान् की प्रेममयी सेवा के लिए दिया गया है।

श्रीमद्भागवतम् की दिव्य विद्या हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण, पंचम स्कन्ध, उन्नीसवाँ अध्याय, “The description of Jambudwipa concluded।”
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण में दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश-रूप में। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद अथवा टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संरक्षण अथवा समर्थन का कोई भाव अभिप्रेत नहीं है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-5-chapter-19-hanuman-hymn-glory-of-bharata-varsha-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञान • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट